तृतीय अध्याय

कुमाऊँ मण्डल में शास्त्रीय संगीत का संवर्धन व संरक्षण

कुमाऊँ मण्डल में अन्य कलाओं के साथ–साथ ललित कलाओं की गौरवशाली परम्परा रही है, मानवीय अनुभूतियों के विभिन्न माध्यमों गायन, वादन, नृत्य, काव्य, शिल्प, मूर्ति, वास्तु इत्यादि से अभिव्यक्त या उकेरने की विद्या को ही कला कहा गया, देवभूमि होने के कारण तथा देवताओं के निवास होने से इसकी प्रकृति स्वतः ही संगीतमय हो गई, क्योंकि देवताओं को संगीत रसिक, संगीत जन्य माना गया है, संगीत की परम्परा भी यहाँ समृद्ध रही है। लोक जीवन से जुड़े हर पहलू को संगीत अपनी स्तर लहरियों में गुनगुनता आया है।

कुमाऊँ मण्डल में शास्त्रीय संगीत की नींव भी यहाँ के लोक संगीत ने ही रखी है। कला कोई भी हो यदि सच्चा कला पारखी मिल जाये तो वह निखर कर सामने आती है और शास्त्रीय संगीत की परम्परा कई अर्से से चली आयी एक विकसित परम्परा है। जो आज भी संगीतज्ञों, विद्वानों संगीत शास्त्रीयों, कुशल शिक्षकों, संगीत के विभिन्न उपादानों पर शोध तथा लेखन कार्य करने वाले विशिष्ठ जन, संगीत प्रेमी, सहृदय श्रोतागण इत्यादि सभी द्वारा संवर्धित व संरक्षित किये जाने में अग्रणीय रही है। यह जनमानस पर अपना प्रभाव छोड़ती है। इसकी शास्त्रीयता को हमारे संगीतज्ञों, गुणीजनों ने सहेज कर रखा है अपनी आने वाली पीढ़ियों के लिये इसलिये शास्त्रीय संगीत की आवश्यकता क्यों जरूरी है, हमारे परिवेश के लिये, उसका क्या महत्त्व है तथा जन जीवन के मानस पटल पर पड़ने वाले प्रभावों, की प्रभावित विवेचना आगे की गयी है।

शास्त्रीय संगीत के संवर्धन व संरक्षण की आवश्यकता

भारतीय शास्त्रीय संगीत सभ्यता, समाज व संस्कृति का दर्पण है। यह भारतीय संगीत का सर्वाधिक, परिष्कृत, औपचारिक तथा जटिलतम् स्वरूप है। जिसका अपना एक स्वतन्त्र निजी शास्त्र है। संगीत जब स्वर व ताल के नियमों में बंधकर शास्त्रानुसार अर्थात् क्रमबद्ध व नियमबद्ध चलता है तब वह शास्त्रीय संगीत कहलाता है। शास्त्र का अर्थ है **''शासन करने वाला या मार्ग दिखाने**

वाला।"[1] शास्त्र की आवश्यकता ज्ञान वृद्धि से है। कोई भी विषय जब एक सामान्य लोक या जनसाधारण में रहता है तब वह उन्मुख रहता है किन्तु जब उसे नियम–क्रम–प्रयोग की सिद्धि के साधनों का कवच पहनाकर, विद्वानों द्वारा माननीय होता है तब वह शास्त्रीय कहलाता हैं।

शास्त्रीय संगीत के बारे में एक विदेशी विद्वान L.K. Mayer ने अपनी पुस्तक – Teaching Children music in elementary School में कहा है – "The music of india is a circums cribed by tradition and closely linked with philoscphical thinking. Its from and melodies bound by right rules and riqulations for example, a raag its type of composition of certion mood only a maquam is a type of melody only a maquam of a certain type may be used in a certain raag."[2] शास्त्रीय संगीत एक वर्ग विषय का संगीत है। शास्त्रोक्ता नियमों में बंधकर रचा–बसा होने के बावजूद यह अपनी महत्त्वता तथा आवश्यकता को स्पष्ट करता है। शास्त्र दिशा ज्ञान वृद्धि का बोधक है और शास्त्रीय संगीत एक ब्रह्मविषयक ज्ञान है। जिसकी सत्ता व सार्थकता की पहचान बौद्धिक विकास से है। जो व्यक्ति को मोक्ष मार्ग दर्शन की ओर प्रशस्त करता है।

शास्त्र शास्त्रीय संगीत को बारीकी से तराश कर सुन्दर, द्विव्य, भव्य और सर्वोपरि समादरणीय बनाता है। जिसकी आवश्यकता प्रायः इस प्रकार देखी जा सकती है कि एक अशिक्षित, विधि–निषेध को न जानने वाला नई–नई कलाओं को सहज भाव से प्रस्तुत करने में सिद्धहस्त होता है परन्तु यदि उसे शास्त्र का थोड़ा ज्ञान हो जाये तो सोने में सुगन्ध का काम हो जायेगा इसलिये शास्त्र ज्ञान वृद्धि बौद्धिक विकास की सुविकसित परम्परा है जो शास्त्रीय संगीत से प्राप्त होता है।

अतः शास्त्र का लक्ष्य और लक्षण भी सामान्जस्य स्थापित करना है। यद्यपि शास्त्र का तात्पर्य केवल नीरस एवं निष्प्राण नियमों सिद्धान्तों के तार्किक

प्रतिपादन मात्र से ही नहीं है, अपितु संगीत कला को बढ़ाने वाले तत्वों के चिन्तन से हैं। शास्त्र का निर्माण विषय को परिष्कृत और समृद्ध रूप से सदा के लिये संजोकर रखने की दृष्टि से लिया जाता है, शास्त्रीय संगीत विषय की रचना भी इसी आधारानुसार हुई है। वैदिक काल से ही संगीत की परम्परा 'लोक व शास्त्र' दो रूपों में परिलक्षित हुई जोकि आज भी विशेषज्ञों के अध्ययन के लिये बहुत ही दिलचस्प विषय बनी हुई है। सामान्यतः समाज में कई पर्व–पूजा, उत्सव–त्यौहार, मेले, महोत्सव अनुष्ठान व पारिवारिक आयोजन कार्यक्रम इत्यादि होते हैं। जो संगीत द्वारा मनाये जाने के फलस्वरूप भी हमारे प्राचीन ग्रंथो से इनका स्वरूप बहुत अधिक स्पष्ट नहीं होता है। इसका कारण शास्त्र बद्ध न होना था। संगीत लौकिक रूप में ही लोगों द्वारा प्रयुक्त किया जाता रहा परन्तु प्रबुद्ध ऋषियों, संगीत विद्वानों ने अपनी धार्मिक कृत्यों में प्रयुक्त संगीत को पूर्णतः नियमबद्ध शास्त्रबद्ध किया, जिससे संगीत शास्त्र की श्रेणी में आया और उसे संरक्षण भी प्राप्त हुआ। शास्त्रीय संगीत का आधार लोक संगीत है, लोक संगीत ही शास्त्रीय संगीत का प्रेरणा स्त्रोत है। जिसके संरक्षण की आवश्यकता अगली पीढ़ी के सुयोग्य पात्र को सोपने के उद्देश्य से हुई। आज आधुनिक युग के वैज्ञानिक दौर में विज्ञान के नये–नये आविष्कारों ने महान् कलाकारों की कृतियों को सुरक्षित रखने व संर्वधन हेतु जन–जन तक पहुँचाने के लिये अनेक महत्त्वपूर्ण कार्य किए, एक समय वह भी था जब कलाकार के साथ उसकी कला भी लोप हो जाती थी, कोई संरक्षण का आधार साधन नहीं था परन्तु आज वर्तमान स्थिति बिल्कुल विपरीत है। आज सम्पूर्ण युग को वैज्ञानिक युग कहा जाता है। मनुष्य प्रत्येक क्षेत्र में प्रगति कर रहा है तथा वैज्ञानिक उपकरणों व सुख सुविधाओं का उपभोग कर जीवन को विकास मार्ग पर अग्रसर कर रहा है। अर्थात् प्रत्येक क्षेत्र में अपना वर्चस्व स्थापित करने में लगा हुआ है क्योंकि निरन्तर साधना का ज्ञान प्राप्त करना ही मानव प्राणी का विशेष गुण है और यही गुण जिज्ञासा और आविष्कारों की जननी है।

शास्त्रीय संगीत शास्त्र ग्रंथों के अध्ययन से ज्ञात होता है कि किस समय गायन की कौन सी शैली प्रचार में थी, वाद्यों का स्वरूप कैसा था, किस वाद्य विशेष का वादन किस अवसर पर होता था तथा नृत्य का क्या स्वरूप था इत्यादि। इन सभी तथ्यों की व्यवस्थित एवं विधिवत् जानकारी शास्त्र ग्रंथों से ही प्राप्त होती है। शास्त्रीय संगीत का आदि ग्रंथ नाट्यशास्त्र है इसके अतिरिक्त बृहदेशी, संगीत रत्नाकर, संगीत परिजात इत्यादि ग्रंथ संगीत शास्त्र ज्ञान के भण्डार स्वरूप उदाहरण हैं। उक्त सभी उदाहरण शास्त्रीय संगीत के शास्त्र अध्ययन की आवश्यकता एवं उसकी उपयोगिता के संदर्भ में संरक्षणता सिद्ध करते हैं।

शास्त्रीय संगीत की आवश्यकता हेतु संवर्धन व संरक्षण में अनेक प्रयासरत कार्य हुए। जिसके अन्तर्गत हमारे भारतीय शास्त्रीय संगीत की धरोहर को संरक्षणता देने के पीछे महान् संगीतज्ञ पं. विष्णु नारायण भातखण्डे व पं. विष्णु दिगम्बर पलुस्कर जी का शास्त्रीय संगीत जगत में अमूल्य योगदान रहा है। इन्होंने शास्त्रीय संगीत की अमूल्य धारा को प्रवाह कर युगों–युगों के लिए एक शास्त्र लिखित स्वरूप देकर संरक्षण की पहल की जो इन विद्वानों के अथक प्रयासों के फलस्वरूप उपलब्ध हुई। हालांकि आज शास्त्रीय संगीत के संवर्धन व संरक्षण के लिए अनेक विद्यालय, महाविद्यालय, सरकारी, निजी संगीत संस्थाएँ विभिन्न सांगीतिक समारोह, इलैक्ट्रानिक माध्यम, मुद्रित माध्यम, दूरदर्शन, आकाशवाणी केन्द्र इत्यादि सभी प्रयासरत है, साथ ही शास्त्रीय संगीत के विद्वान, कलाकार एवं शिक्षक भी अपना पूर्ण सहयोग दे रहे हैं और शास्त्रीय संगीत को अपनी भारतीय संस्कृति की धरोहर के रूप में बनाये रखने में देश, विदेशों में सम्माननीय स्तर प्रदान कर रहे हैं। आज जहाँ संगीत की सभी विद्याएँ फिल्मी संगीत, पॉप म्युजिक, रिमिक्स म्युजिक, पाश्चात्य संगीत का बोलबाला अधिक प्रचार में है। वही शास्त्रीय संगीत भी अपनी अहम् भूमिका निभा रहा है। आज यह कोशिश काफी हद तक सफल हो रही है।

निष्कर्षतः शास्त्रीय संगीत उन महान् गुणीजन विद्वानों, संगीतज्ञों की देन है जिन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन शास्त्रीय संगीत साधना में समर्पित किया है। शास्त्रीय संगीत मानव जीवन की सर्वोच्च अनुभूति कराने में सक्षम है अर्थात् ब्रह्मविषयक ज्ञान प्राप्ति का सर्वश्रेष्ठ साधन है यह अमूल्य धरोहर है जो मानव, समाज एवं संस्कृति की सुविकसित परम्परा है। इस धरोहर को बनाये रखने के लिए इसका संवर्धन व संरक्षण किया जाना परमावश्यक है क्योंकि किसी भी कला के संरक्षण एवं विकास के लिए आवश्यक हैं कि आने वाली अगली पीढ़ी को उस कला का शिक्षण–प्रशिक्षण की समुचित एवं समयानुसार व्यवस्था सुलभ हो, जिसके लिए उसका संवर्धन व संरक्षण दोनों ही आवश्यक हैं।

शास्त्रीय संगीत के संवर्धन व संरक्षण का महत्त्व

शास्त्रीय संगीत के संवर्धन व संरक्षण की आवश्यकता ही उसमें निहित महत्त्व को प्रकट करती है। शास्त्रीय संगीत की महत्त्वता अत्यधिक है परन्तु आधुनिक युग में आज आम जन को इसकी सर्वभौमिकता व महत्त्वता की जानकारी का अभाव है। आम जन के सम्मुख शास्त्रीय संगीत के महत्त्व को बनाये रखने के लिए संगीत ज्ञान माध्यमों द्वारा प्रस्तुत किया जाना चाहिए ताकि शास्त्रीय संगीत की जानकारी व महत्त्वता बनी रहे। जैसा की पीछे बता चुके है कि संवर्धन व संरक्षण के क्षेत्र में सभी संस्थाएँ, कलाकार प्रचार–प्रसार माध्यम इत्यादि अनेक प्रयास कार्य कर रहे है फिर भी इसके पुनरूत्थान के लिए इतने प्रयासों के होते हुए भी शास्त्रीय संगीत के प्रति जनता का झुकाव अपेक्षा से कम ही है। आज राजनैतिक आर्थिक परिस्थितियाँ तथा विदेशी संगीत का प्रभाव इत्यादि भी शास्त्रीय संगीत जगत की महत्त्वता पर प्रश्न चिन्ह अंकित कर रहा है चूँकि शास्त्रीय संगीत का मुख्य उद्देश्य मात्र गायक, वादक व नर्तक बनना ही नहीं अपितु उसकी रूचि को परिष्कृत व सुसंस्कृत बनाना भी है। शास्त्रीय संगीत ऐसी विद्या है जो सामान्य व्यक्तियों में आन्तरिक परिवर्तन कर जीवन के

प्रति उसका सृजन करता है। यह जीवन के अन्तिम लक्ष्य प्राप्ति का सशक्त माध्यम है।

शास्त्रीय संगीत शास्त्रकारी वर्ग नियम बन्धनों में बंधा होने के बावजूद भी अपनी महत्त्वता को स्पष्ट करता है। आज का युवा वर्ग पाश्चात्य संगीत की ओर अधिक ध्यान दे रहा है जबकि पाश्चात्य वर्ग बड़ी गम्भीरता व धैर्य के साथ शास्त्रीय संगीत की ओर उन्मुख है तथा शास्त्रीय संगीत की शिक्षा ग्रहण करने में रूचि भी ले रहा है। आज भारतीय वर्ग शास्त्रीय संगीत शिक्षा ग्रहण करने तथा शास्त्रीय संगीत की महत्त्वता को जानते हुये भी पाश्चात्य संगीत की चका चौंध में लगा है, जो केवल मनोरंजन साध्य है। ये सब देखते हुए ऐसा प्रतीत होता है कि एक वह समय न हो जब हमारा भारतीय संगीत कहीं खो जाये या अन्य प्रान्तों में जाकर कहीं बस जाये।

देखा जाए तो आज हमारी भारतीय संस्कृति की धरोहर को अपने भारतीय जगत में ही कम स्थान मिल रहा है। जबकि विदेशों व पाश्चात्य जगत में शास्त्रीय संगीत परम्परा शिक्षण प्रणाली को संवर्धन व संरक्षण दिया जा रहा है। ऐसी परिस्थितियों में शास्त्रीय संगीत के भविष्य की कल्पना नहीं की जा सकती, जब अपनी भारतीय सांस्कृतिक धरोहर को अपने घर में ही स्थान न मिले जो कि हमारी अमूल्य निधि है। अतः उक्त बातों को ध्यान में रखकर यह आवश्यक है कि हमें शास्त्रीय संगीत के संवर्धन व संरक्षण के महत्त्वता को समझना चाहिए। आज आम जनमानस के समक्ष शास्त्रीय संगीत के महत्त्वों को लाने की अत्यन्त आवश्यकता है, जिसका संक्षिप्त वर्णन निम्न प्रकार से है।

1. जन मानस की भावाभिव्यक्ति का सर्वांगीण विकास –

प्रत्येक व्यक्ति हमेशा से ही कोशिश करता आया है कि वह अपने अन्दर छिपी भावाभिव्यक्ति, प्रतिभाओं को किसी न किसी के समक्ष अभिव्यक्त करे। जिसके लिए वह भाषा–साहित्य, खेल–कूद, चित्रकला, संगीतकला इत्यादि

माध्यमों का सहारा लेकर अपने विचारों को प्रकट करता है। शास्त्रीय संगीत व्यक्ति के भाव–विचारों को व्यक्त करने का सशक्त माध्यम है। शास्त्रीय संगीत से जुड़ने पर व्यक्ति के भाव विचारों के साथ व्यक्तित्व का विकास भी सुचारू रूप से होता है। इस सुमधुर विद्या के रहते व्यक्ति हिंसक, क्रोध, अत्याचारी प्रवृत्तियों से स्वयं ही दूर होने लगता है यह मानव के मानवीय गुणों का विकास करता है। यह ईश्वर प्रदत्त गुण है, जो मानव के सर्वांगीण विकास में सहायक सिद्ध है। यह कलात्मक, शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक सभी स्वरूपों में मानव का सर्वांगीण विकास करता है।

2. शास्त्रीय संगीत द्वारा मानसिक, शारीरिक व आध्यात्मिक विकास –

(क) मानसिक विकास – आज शास्त्रीय संगीत चिकित्सा द्वारा व्यक्ति के मानसिक विकास में सार्थक है। मानसिक रोगों के उपचारों हेतु सांगीतिक प्रयोग काफी लाभकारी सिद्ध हुए है, (Mental Hospital) संगीत चिकित्सा पद्धति (Mental Thearapy) काम में लायी जाती है। असामान्य व्यक्ति में मानसिक बीमारियाँ अधिकतर काल्पनिक होती है। संगीत द्वारा उनके ध्यान को केन्द्रित करके दूसरी ओर करने में सहायता ली जाती है। शास्त्रीय संगीत द्वारा मानसिक तनाव को कम करके शान्ति प्राप्त की जाती है। यह मानसिक विकास में चिन्तन, मनन तथा एकाग्र शक्ति को बढ़ाने में सहायक है।

(ख) शारीरिक विकास – शास्त्रीय संगीत में प्रयुक्त तीनों विद्याएँ गायन, वादन व नृत्य उत्कृष्ट कोटि हेतु शारीरिक विकास में सहायक है। यह एक शारीरिक व्यायाम है, गायन के समय न केवल कण्ठ व फेफड़ों की अपितु जीव्हा, मुंह, होठ, तालु तथा नाभि इत्यादि स्थानों पर खिंचाव के होने से पूरे शरीर का व्यायाम होता है। वादन में सितार, तबला, पखावज़, सारंगी इत्यादि वाद्यों से अँगुलियों, हाथों, कन्धों तथा बासुरी शहनाई, इत्यादि वाद्य श्वास वर्धन व्यायाम है। नृत्य को तो हस्त पद का संचालन योग अर्थात् शारीरिक व्यायाम

का अद्‌भुत उदाहरण कहा गया है। अतः शास्त्रीय संगीत की तीनों विद्याएँ व्यक्ति के शारीरिक विकास के लिए आवश्यक है।

(ग) आध्यात्मिक विकास – व्यक्ति की ईश्वर के प्रति श्रद्धा, आस्था, विश्वास व भक्ति का साध्य संगीत है। प्राचीन काल से ही मनुष्य ईश्वर शक्ति पूजा, अर्चना व आहवान के लिए सांगीतिक ध्वनियों की सहायता लेता आया है जिसके अन्तर्गत भजन, आरती शब्द, गुरुवाणियाँ इत्यादि ईश्वर प्रभुत्वा को स्पष्ट करती है और शास्त्रीय संगीत के अन्तर्गत असंख्य राग, गायन, वादन शैलियाँ, गीत प्रकार, वाद्य यन्त्र इत्यादि है, जिनकी सिर्फ एक ही सर्वोच्च सत्ता है। वह है नाद, अर्थात् ध्वनि शास्त्रीय संगीत को नाद ब्रह्म स्वीकारा गया है –

नाद रूपः स्मृतोब्रहम, नाद रूपों जनार्दनः।
नाद रूपो पराशक्ति, नाद रूपो महेश्वरः।।[3]

शास्त्रीय संगीत परम लक्ष्य की प्राप्ति का साधन है, यह व्यक्ति को ईश्वर के साक्षात्कार हेतु आध्यात्मिक विकास में सहायक है। अनेक साधु–सन्त, ऋषि–मुनियों ने साधना कर परमात्मा के परमानन्द की प्राप्ति की, सूरदास, मीराबाई, स्वामी त्यागराज, स्वामी हरिदास इत्यादि संगीत साधक बनकर आध्यात्मिक लक्ष्य मोक्ष प्राप्ति के उद्धारक है।

3. शास्त्रीय संगीत द्वारा सामाजिक व सांस्कृतिक विकास –

(क) सामाजिक विकास – शास्त्रीय संगीत मानव समाज का आवश्यक अंग तथा सांस्कृतिक धरोहर है। यह हमारे समाज को नवीन कल्पना, प्रकाश, उमंग तथा सौन्दर्य प्रदान करता है। शास्त्रीय संगीत से प्राप्त होने वाला आनन्द हमारे समाजिक जीवन को उदात्त बनाता है। समाज की उन्नति से संबंधित जन कल्याण, देशभक्ति, उच्च आदर्श तथा राष्ट्रीय विकास कार्यक्रम में शास्त्रीय संगीत अपना पूर्ण दायित्व निर्वाह करता है। यह सामाजिक समस्याओं का निवारण कर व्यक्ति को अनेक दुःखों को सहन कर असीम शक्ति प्रदान करने में

सहायक है। यह सामाजिक विकास व सामाजिक जीवन में एक संजीवनी बूटी के समान है।

सांस्कृतिक विकास – सांस्कृतिक मूल्यों का विकास करने तथा सांस्कृतिक तत्वों को बढ़ाने में शास्त्रीय संगीत बहुत महत्त्वपूर्ण सिद्ध होता है। भारतीय संस्कृति के तीन मूल्य तत्व या आधार स्तम्भ है। सत्यम् शिवम् सुन्दरम् वही मूल्य तत्व हमारी भारतीय शास्त्रीय संगीत की सांस्कृतिक धरोहर में समाहित है। भारतीय संस्कृति का नाम ऊँचा उठाने में अपनी अहम् महत्त्वता बनाये हुए है इसलिए भारतीय शास्त्रीय संगीत हमारे भारतीय संगीत की अमूल्य धरोहर कहलाती है। इतना ही नहीं यह भारत की गौरवपूर्ण धरोहर होने के साथ–साथ विदेशों में अपने भारतीय संस्कृति का गौरव प्राप्त किये हुए है।

4. शास्त्रीय संगीत द्वारा शिक्षा एवं व्यवसायिक विकास –

शिक्षा का विकास – शास्त्रीय संगीत शिक्षा की सबसे प्राचीन परम्परा रही है, जिसे गुरु शिष्य परम्परा कहा गया। वास्तव में हमारा भारतीय जगत भाग्यशाली है, जिनकी संस्कृति में गुरु शब्द सदैव वन्दनीय और पूज्यनीय रहा है।

गरु ब्रह्म, गुरुर्विष्णु गुरुर्देवो, महेश्वरः।

गुरुः साक्षात् परब्रह्म तस्मै गुरवे नमः।।[4]

शास्त्रीय संगीत मौखिक व प्रदर्शनात्मक होते हुये भी एक विद्या की भाँति प्राचीन समय से अध्ययन–अध्यापन का विषय बना रहा है। जो तीन स्वरूपों द्वारा सम्पन्न होता है। (1) प्राचीन गुरु शिष्य परम्परा के रूप में (2) संस्थागत शिक्षण व्यवस्था के रूप में (3) पाठ्यक्रम के एक विषय के रूप में, जिसका एकमात्र उद्देश्य व्यक्ति के शिक्षण विकास में सहायक है।

व्यवसायिक विकास – शास्त्रीय संगीत की शिक्षण प्रणाली स्वरूप में अधिकांश लोग व्यवसाय से जुड़ जाते हैं। शास्त्रीय संगीत व्यक्ति को अपना व्यवसाय बनाने में सहायक है, वह शिक्षक हो, कलाकार, संगीतकार, वाद्यों का निर्माणकर्ता, मंच प्रदर्शक इत्यादि अपने जीवन निर्वाह में व्यवसायिक रूप में कार्य कर रहा है कई व्यक्ति शास्त्रीय संगीत को अपनी रूचि के अन्तर्गत लाकर अपने अलग व्यवसाय में भी सहायता लेते हैं। अतः शास्त्रीय संगीत व्यक्ति के न केवल सांगीतिक रूप में बल्कि, सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, भौगोलिक, मनोवैज्ञानिक, व्यवसायिक सभी स्वरूपों में सहायक सिद्ध है।

5. शास्त्रीय संगीत द्वारा राष्ट्रीय एकता की भावना प्रेम बंधुत्व का उद्विकास

शास्त्रीय संगीत मानव कल्याण के हित में सहायक है। यह राष्ट्रीय एकता को बनाए रखने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। संगीत ही एक ऐसा विषय है, जो बिना जाति धर्म–भेद, अमीर–गरीब, छोटे–बड़े किसी भेदभाव को नहीं समझता। यह अराधक है जो विश्व को 'वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना जागृत कराने में सहायक है। विविधता में एकता समाहित करने की शक्ति रखता है। यह राजनैतिक व भौगोलिक सीमाओं के अलावा साम्प्रदायिक सद्भाव तथा विश्व प्रेम में सहायक है। आज शास्त्रीय संगीत की प्रस्तुतियों को एक देश का सांस्कृतिक मण्डल दूसरे देशों में प्रदर्शित करता है, जिसमें परस्पर सहयोग व प्रेम की भावना निहित होती है। शास्त्रीय संगीत के प्रदर्शन में कई धर्म हिन्दू, मुस्लिम, सिक्ख, ईसाई बौद्ध, पारसी इत्यादि साथ बैठकर कला का आनंद प्राप्त करते है। जिससे सम्प्रदायिक झगड़े स्वतः ही समाप्त होते हैं। ईश्वर शक्ति प्रेम का गुंजित वातावरण विश्व बन्धुत्व की प्रेरणा भावना को बढाता है। अतः शास्त्रीय संगीत अपनी सम्पूर्ण विश्व को एकता के सूत्र में बाँधे रखने में सहायक है।

''शास्त्रीय संगीत के संवर्धन व संरक्षण का जन मानस पर प्रभाव''

गोपी पतिरनंतोडपि गति ध्वनि वंशगतः।

साम गीतरतो ब्रह्मा वीणासका सरस्वती।।[5]

अर्थात् गोपी, पति (श्रीकृष्ण) भी गीत की ध्वनि के वशीभूत है। ब्रह्मा जी को साम गान प्रिय है तथा सरस्वती जी वीणा पर आशक्त है।

उक्त पक्तियों से स्पष्ट है कि जब हमारे देवी–देवता भी संगीत के प्रभाव से अछूते नहीं है। तब साधारण जन मानस पर इसका समुचित प्रभाव न पड़े ऐसा कैसे संभव है? वस्तुतः शास्त्रीय संगीत तो स्वयं नाद स्वरूप सारे ब्रह्माण्ड में व्याप्त है। व्यक्ति जन्म से पूर्व गर्भावस्था में ही विभिन्न संस्कारों द्वारा संगीत से जुड़ जाता है तथा मृत्युपर्यन्त उसका सहचर रहता है। जिसे मोक्ष प्राप्ति का साधन स्वरूप स्वीकार किया गया है। मानव जीवन का दूसरा नाम संगीत है। यह कहा जा सकता है क्योंकि इसके अभाव में हमारे यहाँ कोई संस्कार, पर्व–उत्सव सामाजिक आयोजन, धार्मिक अनुष्ठान आदि का कार्य न तो प्रारम्भ होता है और न ही पूर्ण माना जाता है। यह व्यक्तिगत व सामाजिक रूप से हर क्षण जन मानस को प्रभावित करता है।

शास्त्रीय संगीत सामवेद द्वारा मुखरित हुआ। यह शिक्षण प्रशिक्षण रूप में प्राचीन समय से ही गुरू शिष्य परम्परा के अन्तर्गत विकसित होता गया। गायकी के विविध घरानें एवं उनकी विशिष्ट गायन शैलियाँ भी इस गुरू शिष्य परम्परा के कारण ही अस्तित्व में आयी। जब महान् गायक अपनी विशिष्ट शैली के कारण आने वाली पीढ़ी के लिए आर्दश बन गयी। तभी कोई नया घराना अस्तित्व में आया और शाखा–प्रशाखा उसकी शिष्य परम्परा में विस्तार कर जन मानस के समक्ष आया।

आज समय परिवर्तन के साथ शास्त्रीय संगीत के क्षेत्र में प्राचीन गुरू शिष्य परम्परा में भी कई परिवर्तन आ चुके है। गायन, वादन व नृत्य तीनों

शैलियों में नवीनता का समावेश हो चुका है। जन मानस का विकास समाज की विभिन्न परिस्थितियों में होता है, जब वह किसी नवीन परिस्थिति के सम्पर्क में आता है तो उसके साथ स्वयं को भी अभियोजित करने का प्रयास करता है। यह प्रयास उसके व्यवहार व अनुभूति में परिवर्तन लाता है और यही परिवर्तन को सिखना या शिक्षा कह सकते है चूँकि शास्त्रीय संगीत शिक्षा की सबसे प्राचीन परम्परा रही है और वर्तमान समय में शास्त्रीय संगीत सामूहिक शिक्षा पद्धति के रूप में दी जा रही है। शिक्षाविदों ने इसे तीन वर्गों में बाँटने का प्रयास किया। प्राथमिक स्तर, माध्यमिक स्तर एवं उच्चतम् स्तर, जिसमें यह सर्वसाधारण के लिए सुलभ हुई। संगीत शिक्षा के लिए ऐसी संस्थाएँ एवं विद्यालयों की स्थापना हुए जो केवल संगीत शिक्षा के उद्देश्य को ध्यान में रखकर की गई जिसके कारण संगीत संकीर्णता से निकलकर व्यापक रूप में फैला।

आज शास्त्रीय संगीत का प्रचार–प्रसार अपनी चरम सीमा पर है। अधिकांश शहरों में शासकीय संगीत शिक्षा केन्द्र स्थापित हैं। सरकार ने संगीत विषय में उच्च स्तरीय शिक्षा प्रारम्भ की। प्रतिवर्ष छात्रवृत्तियों का विवरण, सांस्कृतिक शिष्य मण्डलों को विदेशों में भेजना, शिक्षा मंत्रालयों द्वारा विश्वविद्यालयों में संगीत एक प्रतिष्ठित विषय के रूप में स्थापित हुआ है। आज अधिकतर माता–पिता अपने बच्चों को संगीत सिखाना चाहते हैं और कलाकार बनाने की उत्कृष्ट इच्छा भी रखते हैं।

आज जन मानस पर शास्त्रीय संगीत के प्रत्यक्ष प्रभाव का सीधा साधन टेलिविजन को मानना अधिक उचित होगा इसके अतिरिक्त कई माध्यम रेडियो, आई पाड, एम. पी. 3 प्लेयर, इंटरनेट इत्यादि द्वारा संगीत जनमानस के सर्म्पक में आया है, आज का युवा वर्ग सर्वाधिक फिल्मी संगीत व टेलिविजन पर प्रसारित कार्यक्रमों से अत्यधिक प्रभावित हुये हैं।

वर्तमान में टेलिविजन पर बहुत से ऐसे सांगीतिक कार्यक्रम आ रहे हैं, जो युवाओं को आकर्षित कर रहे हैं। इन कार्यक्रमों में मुख्य है – सारेगामापा, लिटिल चैम्प, इण्डिन आइडल, वायस आफ इण्डिया इत्यादि टेलिविजन पर होने वाले यह वह कार्यक्रम है। जिनसे युवाओं में शास्त्रीय संगीत के प्रति रूचि व ज्ञान जागृत करने की काफी हद तक वृद्धि हुई है। जगह–जगह से युवा वर्ग, बच्चे इन कार्यक्रमों में भाग लेकर प्रतिभागी बनते हैं। इन कार्यक्रमों में फिल्मी संगीत के साथ शास्त्रीय संगीत भी प्रस्तुत किया जाता है। निर्णायक, गुणीजन द्वारा शास्त्रीयता के महत्त्वों को आम जन मानस के सम्मुख रखकर महत्त्वपूर्ण बातों पर ध्यान और ज्ञान दिया जाता है। यह गुणीजन निर्णायक स्वयं भी शास्त्रीय संगीत के ज्ञाता व सीखे होते हैं। ये प्रोग्राम में चयनित प्रतिभागियों को शास्त्रीय संगीत का प्रारम्भिक ज्ञान देकर उन्हें आगे बढ़ने की प्रेरणा देते हैं।

इन कार्यक्रमों द्वारा आज के युवा वर्ग व माता–पिता बहुत प्रभावित हो रहे हैं। ये अपने बच्चों में शास्त्रीय संगीत शिक्षा दिलवाने के लिए प्रोत्साहित भी हुए हैं। जिसके फलस्वरूप कई बच्चे शास्त्रीय गायन, वादन व नृत्य की तालीम लेकर अपनी रूचि के अनुसार प्रतिभागी बनते है। टेलिविजन रियलटी प्रोग्राम सारेगामापा लिटिल चेम्प (Little Champ 2009) के अन्तर्गत ऐसे ही बच्चे सामने आये। जिसमें कठिन से कठिन गानों की रचना को आसानी से वह बहुत कम समय में नोटेशन करने की अद्‌भुत प्रतिभा दिखाई दी। कुछ शास्त्रीय संगीत विद्या को सीखे हुये थे, तो कुछ बच्चों में यह ईश्वर प्रदत्त गुण भी नज़र आये क्योंकि कई बार शास्त्रीय विद्या ग्रहण करने पर भी कई त्रुटियाँ नजर आती हैं।

अतः शास्त्रीय संगीत तो ज्ञान का सागर है। व्यक्ति जितना सिखता है। उतना ही निखरता जाता है इसके अतिरिक्त टेलिविजन पर कुछ कार्यक्रम राष्ट्रीय प्रसारण द्वारा केवल शास्त्रीय संगीत पर आधारित होते हैं। जिसमें शास्त्रीय संगीत का प्रदर्शन किया जाता है शास्त्रीय संगीत जगत में उभरते नवीन कलाकारों को मंच प्रदान किया जाता है। यह प्रोग्राम शास्त्र विद्या के उच्च स्तर का होता है। जिसमें आम जनता भी शास्त्रीय संगीत में रूचि लेने

वाली व आनन्द की अभिव्यक्ति करने वाली होती है। शास्त्रीय संगीत स्वयं में ब्रह्मा स्वरूप सदोहर है। इसके अन्तर्गत जन मानस अपने सांसारिक वस्तुओं को भूलकर उस परमात्मा के साक्षात्कार का अनुभव प्रतीत करता है। जो जीवन का अंतिम लक्ष्य मोक्ष मार्ग दर्शन है।

आज की युवा पीढ़ी में शास्त्रीय संगीत के प्रति रूचि बढ़ती जा रही है। आज शास्त्रीय संगीत का प्रयोग अत्यधिक प्रचलन में आया है। अधिकतर फिल्मी गाने गज़ल भजन सब किसी न किसी राग पर आधारित होते हैं इसके अन्तर्गत कई फिल्मी गीत जिसमें विभिन्न प्रकार के कठिन आलाप व तानों का अल्प किन्तु चमत्कारिक प्रयोग हो रहा है जिससे युवा वर्ग बहुत जल्दी से प्रभावित होता है तथा वह शास्त्रीय संगीत को जानने सिखने को उत्साहित भी होता है। आज शास्त्रीय संगीत में जन मानस के व्यवसायिक क्षेत्र में भी अधिकता पायी है, जिसके अन्तर्गत वह अपनी प्रतिभा रूचि के अनुसार व्यवसाय चुनकर शास्त्रीय संगीत की शिक्षा ले रहे है। वहीं अनेक व्यक्ति शास्त्रीय संगीत का प्रदर्शन केवल भारत में ही नहीं अपितु विदेशों में भी जाकर देते हैं। जिससे शास्त्रीय संगीत के प्रचार–प्रसार से लोगों में शास्त्रीय संगीत के प्रति रूझान पैदा होता है, जिसका स्पष्ट रूप हमें तब पता लगता है जब विदेशी जन भारत में आकर शास्त्रीय संगीत की विधिवत् शिक्षा ग्रहण करने को आते हैं और अपने जीवन के लक्ष्य को निधारित दिशा देते हैं।

इस प्रकार शास्त्रीय संगीत का जन मानस पर प्रत्यक्ष रूप से प्रभाव पड़ता है, क्योंकि यह समृद्ध परम्परा पूरे विश्व में अपनी आवश्यकता, महत्त्व व प्रभाव से व्यक्ति जीवन का उचित मार्ग प्रशस्त करती है, जिसमें उत्तराखण्ड के कुमाऊँ मण्डल का क्षेत्र भी इससे अछूता न रहा। यह देवभूमि पूर्वकाल से वर्तमान तक शास्त्रीय संगीत की समृद्ध भूमि रही है, जिसकी अमिट छाप इस बात की पुष्टि करती है कि आज भी वर्तमान पीढ़ी के ऊपर बड़ी जिम्मेदारी है कि वह शास्त्रीय संगीत की सांस्कृतिक विरासत को संरक्षित रखे तथा सांगीतिक

परम्पराओं और कलाओं की अक्षुण्यता को बनाये रखने के लिए प्रयास करें, क्योंकि निरन्तर प्रयास ही आगे बढ़ने की प्रक्रिया है जिसका न आदि है और न ही अन्त।

शास्त्रीय संगीत के संवर्धन व संरक्षण में कुमाऊँ मण्डल के श्रोतागण –

शास्त्रीय संगीत आध्यात्मिकता से जुड़ा है। यह आत्मा से निकलता है, भक्ति से पोषित होता है और इसकी परिकाष्ठा आत्मा सिद्धि में होती है। यह गायक व श्रोता दोनों को ओत–प्रोत कर देता है। इसकी उन्नति, नवीनता, उत्तमता के लिए कला (श्रोता) पारखी का होना अत्यन्त आवश्यक है। प्राचीनता से ही यह अपनी विशिष्ठता श्रेष्ठता व मौलिकता के लिए प्रख्यात है। इस अमूल्य धरा के संवर्धन व संरक्षण हेतु अनेक प्रयास होते रहे है। शास्त्रीय संगीत के संवर्धन व संरक्षण में प्रत्यक्ष रूप से तीन पक्ष उभरकर हमारे समक्ष आते है (1) कला (2) कलाकार (3) श्रोता

मानव भावनाओं की सुन्दर अभिव्यक्ति अर्थात् आनन्द तथा सौन्दर्य की सुन्दरतम् अभिव्यक्ति कला है तथा अभिव्यक्तिकार कलाकार और कला का पारखी श्रोता अर्थात् सुनने वाला, जिसके समक्ष कलाकार अपनी कला का प्रदर्शन करता है। हर कलाकार अपनी कलाकृति को दूसरे के समक्ष प्रस्तुत करता है। फिर चाहे उसकी कला का उद्देश्य यश, अर्थ, आत्मा, सन्तोष, आनन्दित व लाभान्वित प्राप्त करना हो परन्तु यह सत्य है कि वह अपनी कला प्रस्तुत करता है। श्रोताओं द्वारा सराहे जाने के फलस्वरूप ही कला की सार्थकता व सफलता सिद्ध होती है। शास्त्रीय संगीत कला, कलाकारों की एक पूंजी है, जो आश्रयदाताओं द्वारा सुरिक्षत रही है।

प्राचीन व मध्यकाल में शास्त्रीय संगीत कला का मुख्य आश्रयदाता राजा हुआ करते थे। अपने राजदरबारों में विद्वान शास्त्रकार, श्रेष्ठ कलाकारों के निर्वाह की पूर्ण जिम्मेदारी राजा स्वयं उठाते थे। जिसके संवर्धन देने के पीछे

आश्रयदाताओं का मुख्य उद्देश्य कला का संरक्षण किया जाना था। शास्त्रीय संगीत के संवर्धन व संरक्षण का प्रचलन इन्हीं राज दरबारों से प्रारम्भ हुआ। आगे चलकर समय के बदलते प्रारूप में राजाओं का राजाश्रय समाप्त हुआ और शास्त्रीय संगीत लोगों के आश्रय पर जीवित रहने लगा। साथ ही मानव जीवन की गति भी तेज हुई वैज्ञानिक तकनीक द्वारा अनेक क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए, जिसमें भारतीय शास्त्रीय संगीत की स्थिति बिल्कुल भिन्न हो गयी।

आधुनिक समय में विज्ञान के चमत्कारिक आविष्कारों द्वारा संगीत कार्यक्रम प्रस्तुत किए जाने लगे। कलाकारों पर रसिक श्रोताओं की रूचि समझकर कार्यक्रम नवीन परिवर्तनों के साथ नवीन स्वरूप में प्रस्तुत किये गये। आकाशवाणी, दूरदर्शन, टेपरिकॉर्डिंग, ग्रामोफोन, रेकॉर्डस इत्यादि साधनों के माध्यम से सामान्य व्यक्ति को भी श्रेष्ठ कलाकार के कार्यक्रम घर बैठकर सुनने का सुलभ अवसर प्राप्त हुआ। उसी प्रकार शास्त्रीय संगीत विद्यालय, महाविद्यालय, विश्वविद्यालय, संगीत संस्थाएँ केन्द्रों द्वारा प्रतिवर्ष लाखों विद्यार्थी शिक्षण पाकर बाहर आये, जिससे संगीत रसिक श्रोताओं की संख्या भी बेहद बढ़ने लगी, संगीत के छोटे–छोटे कार्यक्रमों में हजारों रसिक श्रोतागण उपस्थित होने लगे, जिसमें कई कलाकार द्वारा संगीत सम्मेलन, महफिलों सभाओं, गोष्ठियों और कन्सर्ट आदि पर इन्होंने अपनी अप्रतिम प्रतिभा से प्रतिष्ठा पाकर शास्त्रीय संगीत को आम जन मानस के सम्मुख रखा। शास्त्रीय संगीत की सफलता जितना कलाकार की कुशलता ज्ञान व अभ्यास पर निर्भर करती है उतनी ही श्रोताओं के आचरण व सहयोग पर करती है इसलिए दोनों का सामंजस्य द्वारा ही कला की कुशलता व प्रशंसा की जाती है दोनों का ताल–मेल एक स्वरूप प्रदान करता है। ''किशोरी अमोणकर के अनुसार–संगीत तो भावमय है और भावहीन संगीत एक डरावना शून्य है। भाव की मर्यादा तथा आकृति की अनुभूति कलाकार और श्रोता दोनों को ही होती है।''[6]

चूँकि प्रत्येक कलाकार अपनी कला के माध्यम से श्रोताओं के हृदय में अपना एक स्थान, जगह बनाता है। कार्यक्रम के दौरान प्रारम्भ से लेकर समाप्ति तक सभी श्रोताओं की आँखे व कान कलाकारों पर ही केन्द्रित होती है। श्रोता अच्छे संगीत को सुनकर अपने जीवन से जुड़ी विभिन्न अनुभूतियों की कल्पना करने लगता है। ऐसी सुखद अनुभूति कल्पना शक्ति शारीरिक व मानसिक सुप्रभाव में सहायक है। जो श्रोतागण में संगीत के प्रति लगाव पैदा करता है। कलाकार भी अपनी स्वर साधना स्वरूप कल्पना के माध्यम से आनन्द की अनुभूति बिखेरता है अर्थात् जब कलाकार अपनी कला में लिप्त हो जाता है सांसारिक सौन्दर्य से ऊपर उठकर आनन्द की प्राप्ति करता है यह उस समय उसकी चर्मोत्कृष्ट अवस्था होती है तब श्रोतागण भी उस सौन्दर्य, अनुभूति पूर्व वातावरण में ऐसा प्रतीत करता है कि मानो कलाकार के रूप में उसका ईश्वर से साक्षात्कार हुआ हो, अर्थात् कलाकार स्वयं ईश्वर छवि के रूप में आभास होता है चूँकि श्रोता का कार्य भी कलाकृति का अस्वादन प्राप्त करना है और कलाकार इसका पूर्ण ध्यान रखता है। वह शास्त्र नियमों बन्धनों को बखूबी निभाता है। अवगुणों का परित्याग कर सभी नियम पालन अनुसार गुणों को ध्यान में रखकर प्रस्तुति करता है। तभी वह श्रेष्ठ कलाकार भी कहलाता है इसलिए कला के साथ कलाकार और श्रोता भी अपना महत्त्व व आवश्यकता को स्पष्ट करते है।

जब कलाकार अपनी कला प्रस्तुत करे और श्रोतागण सहृदय उसको श्रवण करे, तो वह कलाकार के लिए प्रेरक शक्ति बन जाता है अन्यथा कभी–कभी ऐसा भी होता है कि कलाकार तो अपनी कला में डूबकर भरपूर आनन्द गायन प्रस्तुत कर रहा है परन्तु सामने बैठा श्रोता उस 'आनन्द व रस' से अनभिज्ञ था। वह अन्य श्रोता से वार्तालाप या मुख–मुद्रा, साज–सज्जा, पांडाल की लाइटिंग इत्यादि निहारने में व्यस्त है। ऐसी परिस्थिति में प्रस्तोता को भी प्रदर्शन में आनन्द की प्राप्ति नहीं होती क्योंकि अच्छे कलाकार का ध्येय यही है कि वह अपने प्रदर्शन से अपनी कला के जादू से श्रोता रसिक या दर्शक

को पूर्ण आनन्द की अनुभूति करा सके। जब कलाकार की किसी 'बात' पर 'दाद' अर्थात् प्रस्तुति के उन महत्त्वपूर्ण मार्मिक स्थलों पर श्रोताओं से प्रशंसा मिलती है। तब कलाकार की कला और निखरकर सामने आती है। साथ ही अच्छे श्रोताओं द्वारा की प्रशंसा यह भी प्रमाणित करती है कि श्रोता कला का पारखी है। इन्हीं महत्त्वता को देखते हुए श्रोताओं के कुछ वर्ग है। जैसे – सहृदय रसिक श्रोता, उत्तम गुणग्राही श्रोता, दर्शक या निरिक्षण, कुलीन वर्ग या बनावटी, दिखावटी श्रोता आदि। ये सभी श्रोताओं को संगीत की तीनों विद्याओं के अन्तर्गत रखा गया। शास्त्रीय संगीत के श्रोता, सुगम संगीत के श्रोता व लोक संगीत के श्रोता, अर्थात् श्रोताओं की रूचि, इच्छानुसार को देखते हुए श्रोतागणों को संगीत का महत्त्वपूर्ण पक्ष समझा गया है। किसी भी देश की सच्ची उन्नति तभी सम्भव है। जब अच्छे कलाकारों के साथ–साथ कला का रस लेने वाले रसिक अच्छे श्रोतागण भी वहाँ मौजूद हो।

चूँकि शोध शीर्षक उत्तराखण्ड के कुमाऊँ मण्डल क्षेत्र से संदर्भित है तथा शास्त्रीय संगीत को लेकर यह पाया गया कि यहाँ के श्रोतागण इस परम्परागत विधा को लेकर सदा ही जागरूक रहे हैं। वे कला को परखना बखूबी जानते हैं चूँकि शास्त्रीय संगीत के संवर्धन व संरक्षण में कुमाऊँनी समाज जहाँ उन्नति विकास क्रम में लगा है वहीं यह प्राचीन परम्परा को कुमाऊँ मण्डल के श्रोतागण महान् कलाकारों, संगीत प्रेमियों, संगीतज्ञ, विद्वानों को सम्मान व उनकी कला को दाद देने, उनका उत्साहवर्द्धन करने का सिलसिला यहाँ सदियों से चला आया है, जो एक अटूट धागे में बंधा हुआ है, जिसका स्पष्ट स्वरूप हमें कुमाऊँनी समाज में आयोजित उन सभी शास्त्रीय सांगीतिक कार्यक्रमों द्वारा प्रतीत होता है। जब श्रोतागण बड़े उत्साह तथा प्रेम पूर्वक बड़ी संख्या में कला का रसास्वादन लेने आते हैं तथा भागीदार बनकर अपना पूर्ण सहयोग देते हैं। यह सब देखते हुए ऐसा प्रतीत होता है कि संगीत के प्रति श्रोताओं का विशेष लगाव है और संगीत के प्रति प्रेम इनमें कूट–कूट कर भरा हुआ है।

शास्त्रीय संगीत कला पक्ष की ओर कुमाऊँ, आंचल सुदृढ़ रहा है। यह इस बात को दर्शाता है कि जहाँ एक ओर यहाँ आदिम जातियों, शासनों का अधिपत्य रहा, वहीं दूसरी ओर संगीतज्ञ विद्वान कलाकारों ने यहाँ जन्म लेकर इस भूमि पर अपना वर्चस्व बनाया इन्होंने अपनी प्रबल इच्छा शक्ति और निष्ठापूर्ण साधना सरित अपनी कला को भावपूर्ण प्रदर्शित कर श्रोता जन को आकर्षित किया। कुमाऊँ मण्डल में शास्त्रीय संगीत के अन्तर्गत जो श्रोतागण आते हैं। उन्हें उत्तम गुण ग्राही श्रोता कहा जा सकता है। यह शास्त्रीय संगीत के अच्छे ज्ञाता है, जो कार्यक्रम आयोजन की जान होते है, क्योंकि एक अच्छा कलाकार भी किसी आयोजन महफिलों में ऐसे ही श्रोताओं को ढूँढता है, कुमाऊँनी समाज में शास्त्रीय संगीत के ये श्रोतागण उच्च कोटि के गायक, वादक, नृतक, शास्त्रीय ज्ञाता, विद्वान है, जो समाज में एक विशिष्ट दर्जा पाते हैं। कुमाऊँ मण्डल में शास्त्रीय संगीत के इन श्रोताओं की विशिष्ट पहचान है। ये शास्त्रीय रागों की रंजकता, रसात्मकता, ललित्य, माधुर्य आदि के साथ–साथ सैद्धान्तिक पक्ष की परिपक्ता का विश्लेषण बड़ी खूबी से कर, एक स्तर पर कला का आंकलन करते हैं।

शास्त्रीय सांगीतिक कार्यक्रम सम्मेलन, प्रतियोगिता का हिस्सा बनकर अपनी अहम् भूमिका भी दर्शाते हैं, शास्त्रीय संगीत के ये श्रोतागणों की यह पहचान होती है कि ये कार्यक्रम के प्रारम्भ से कुछ समय पहले पहुँचते है व ऐसा स्थान अपने अनुसार चुनते हैं जहाँ से श्रवण या दर्शन भली–भाँति कर सके कलाकार की सुन्दर–सुन्दर मुर्की, मीड़, गमक की छोटी–छोटी हरकतों में ये दिल खोल के 'दाद' देते हैं। इनके विशिष्ट गुणों से ये अच्छे समीक्षक भी माने जाते हैं। कला की सही–सही परक या न्यायपूर्ण समीक्षा करना, आलोचना या टिप्पणी करना इनका विशेष गुण है। कुमाऊँ मण्डल में शास्त्रीय संगीत के ये श्रोतागणों में कुछ श्रोता संगीत शिक्षक, विद्वान या बुजुर्ग कलाकार भी हैं। इनकी सबसे महत्त्वपूर्ण विशेषता यह है कि ये श्रोता समाज में या अपने से सम्बन्धित समूह व्यक्तियों को शास्त्रीय संगीत के प्रति प्रेरित करते हैं उन्हें भी अपने साथ

शास्त्रीय संगीत की संध्याओं में लाकर शास्त्रीय संगीत के प्रति उनके रूझान में वृद्धि करते हैं। अतः यह स्पष्ट है कि कलाकार के साथ कला का सच्चा श्रोता ही कला के अलौकिक आनन्द का अधिकारी होता है और कुमाऊँ मण्डल के ये श्रोतागण शास्त्रीय संगीत की परिपक्ता को कुमाऊँनी समाज में एक उच्च कोटि का स्थान दिलाने में समर्थ है।

पाद टिप्पणी

1 गुर्जर, सीता (2009), लघु शोध प्रबन्ध, भारतीय संस्कृति की धरोहर उत्तर भारतीय शास्त्रीय संगीत पद्धति की लोकप्रियता : एक विवेचन, संगीत विभाग ललित कला संकाय, प्रकाशन वनस्थली विद्यापीठ, पृ.सं.–9

2 वही

3 दत्ता, डॉ. पूनम (2005), भारतीय संगीत (शिक्षा और उद्देश्य), राज. पब्लिकेशन, पृ.सं.–96

4 मिश्रा, मंजू (2009), शिक्षण कौशल और शिक्षा की समस्याएँ चतुर्वेदी पब्लिकेशन्स, जयपुर, पृ.सं.–14

5 पाण्डेय, विवेक (2014), अभिनव मीमांसा, चाहचन्द, जीरा रोड़, प्रकाशन इलाहाबाद, पृ.सं.–114

6 माथुर, डॉ. निशि, (2001), भारतीय संगीत कलाकार (वंशानुक्रम व वातावरण), स्कीम पब्लिकेशन, प्रकाशन जयपुर, पृ.सं.–11